International Journal of Literacy and Education

E-ISSN: 2789-1615
P-ISSN: 2789-1607
Impact Factor: 5.69
IJLE 2022; 2(2): 125-130
www.educationjournal.info
Received: 26-08-2022
Accepted: 21-10-2022

चन्द्रशेखर
एसोसिएट प्रोफेसर, पी.जी. इतिहास विभाग, सर छोटू राम राजकीय महिला महाविद्यालय, सांपला, रोहतक, हरियाणा, भारत

Corresponding Author:
चन्द्रशेखर
एसोसिएट प्रोफेसर, पी.जी. इतिहास विभाग, सर छोटू राम राजकीय महिला महाविद्यालय, सांपला, रोहतक, हरियाणा, भारत

नैणसी री ख्यात के आधार पर मध्यकालीन राजपूती समाज एवं राजनीति की प्रमुख संस्थाओं की निरन्तरता एवं परिवर्तन की ऐतिहासिक समीक्षा

चन्द्रशेखर

सारांश
मध्यकालीन राजपूती समाज एवं राजनीति अनेक प्रमुख संस्थाओं से संचालित थी। भाई बाट प्रणाली, भाई बाट चाकर, सगा, पट्टादारी ऐसी प्रमुख संस्थाओं की राजपूती समाज– राज्य व्यवस्था में प्रमुख भूमिका थी। नैणसी री ख्यात में उल्लेखित *'बातो'* से स्पष्ट होता है इन संस्थाओं की प्रकृति अलग–अलग कालों में बदलती रही तथा इनमें समय–समय पर ढांचागत बदलाव हुये जो राजपूती राज्य और समाज को विकेन्द्रियकरण से केन्द्रियकरण की ओर ले जा रहे थे।

कूट शब्दः भाई बाट, चाकर, ख्यात, बात, पट्टा, सगा

प्रस्तावना
मध्यकालीन राजस्थान के प्रमुख रियासतों का आधार यद्यपि अलग–अलग वंशीय परम्परायें थी परन्तु ढांचागत स्तर पर ये सामान्यत सभी राज्य एक समान राजपूती–राजनैतिक–सामाजिक प्रणालियों (संस्थाओं) से संचालित थी। सामान्यतः इन सभी राज्यों के लिए यह स्वीकार किया जाता है कि इन सभी राज्यों के ऊपरी ढांचा संपूर्ण मध्यकाल में अपरिवर्तनशील रहा तथा कोई मूलभूत परिवर्तन नहीं हुये। परन्तु 'नैणसी री ख्यात' में आरम्भिक अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि इन राजपूती रियासतों में ढांचागत परिवर्तन की अवस्थायें थी तथा इन परिवर्तनों को राजपूती मूल्यों–मान्यताओं से सीधा टकराव भी स्थानीय स्तर पर अवश्य होता था। ये परिवर्तन राजपूती राजनैतिक एवम् सामाजिक संस्थाओं में अन्तर्विरोधों व विरोधाभासो से जुड़े थे जो स्थानीय स्तर की प्रतिक्रियाओं द्वारा मुखरित होते थे। प्रस्तुत लेख में नैणसी–री–ख्यात में दर्ज ऐतिहासिक घटनाक्रमों बातों के द्वारा उन अर्न्तविरोधों, प्रतिरोधों को उजागर कर–टकरावों, चिन्ताओं के सन्दर्भ में न केवल ढांचागत बदलावों को रेखांकित किया है।

मध्यकालीन राजस्थान में लिखित सभी ऐतिहासिक एवं साहित्यिक का विधाओं को, आगे बढ़ाने का कार्य उन चारण, भाटों के द्वारा हुआ जो रापजूत शासक वर्गों के साथ परम्परा से जुड़े थे और इन के आश्रय में वंश–कुल विशेष के बीते कल की घटनाओं, को सजों कर रखने का कार्य करते थे। चारण, भाटो की ये परम्परायें विशिष्ट चेतना की दर्शाते हैं तथा हमें वंश–कुल विशेष के अतीत की पृष्ठभूमि का लेखा जोखा समझने में सहायता करते थे। क्षेत्रीय स्तर के चेतना के ये अंश केन्द्रीय स्तर पर प्रज्वलित ऐतिहासिक परम्पराओं– ऐतिहासिक विधाओं के प्रचलन से किसी न किसी रूप से अर्न्तक्रिया के रूप में प्रभावित हुई।

अपने उद्भव–विकास की दृष्टि से ख्यात रचना परम्परायें मुगलों द्वारा 16वीं शताब्दी में मुगल साम्राज्य की स्थापना से भी जुड़ी थी। जहाँ राजपूतों एवं मुगलों को बीच सम्पर्क सूत्र बढ़े–केन्द्र–क्षेत्रीय सम्बन्धों को नया आयाम मिला तथा मुगलों की इन राजपूत वंशों कुलों की ओर अधिक जानकारी प्राप्त करने की जिज्ञासा बढ़ी, तो इन राजपूती वंशों द्वारा विधिवत् रूप से अपने स्थानीय स्तर की जानकारियों को नियमबद्ध होकर सुरक्षित रखने की चेतना ओर अधिक बढ़ी।

इसीलिए ख्यात–रचनाओं का सृजन मुगल बादशाह अकबर के काल से आरम्भ माना जाता है। अकबर के शासनकाल में जब अबुल फजल द्वारा अकबरनामा के लेखन हेतु सामग्री एकत्रित की गई तब विभिन्न राजपूताना की रियासतों को उनके राज्य वंश एवम् दूसरी ऐतिहासिक विवरण भेजने के आदेश हुये। इसी प्रति उत्तर में ख्यात रचनाओं को व्यापकता के साथ लिखा गया। इस प्रकार विधिवत् रूप से 16वीं शताब्दी के पहले की ऐतिहासिकता– अपने अपने वंश की प्राचीनता की वैध जताने के लिए सामग्री डाली गई और ख्यात रचनायें पूर्व मध्यकालीन विवरणों को भी अपने वर्तमान रूप में समेटे थी। हालांकि 16वीं शताब्दी तथा उससे पूर्व की जानकारी प्रत्येक ख्यात के मूल स्वरूप में प्राप्त होती हैं।[1]

मुहंतो नैन्सी एवम् उनकी रचना नैणसी *री ख्यात–*
नैणसी री ख्यात – मुहणोत नैणसी की सबसे प्रसिद्ध रचना है। मुहणोत नैन्सी को राजस्थान के

इतिहास में मध्यकालीन भारत में मुगल अकबर के दरबारी इतिहासकार अबुल फलज का दर्जा प्रदान किया जाता है तथा दोनों के बीच काफी समानताएँ ढूंढी जाती है।[2] नैन्सी ने फजल से प्रभावित होकर मारवाड का राजकीय इतिहास लिखा क्योंकि मारवाड राज्य के विभिन्न पदों पर रहते हुये उसे अपने ऐतिहासिक ग्रन्थ के लिए सामग्री काफी उपलब्ध थी। परन्तु यह तथ्य भी उजागर हुआ है कि विषय के प्रस्तुतीकरण में नैणसी का वर्णन फजल से भी अधिक विश्वसनीय तथा प्रमाणित था विशेषकर स्थानीय हालातों का ब्यौरा प्रस्तुत करने में।

मुहनोत नैणसी[3] जोधपुर राज्य में महाराजा जसवन्त सिंह प्रथम के दिवान थे तथा इनका परिवार अनेक पीढ़ियों से राज्य सेवा में जुड़ा था। इसलिये नैणसी ने अपने ऐतिहासिक ग्रन्थ *'नैणसी–री–ख्यात'*[4] को इन्हीं के आश्रय में लिखा तथा इसलिए ग्रन्थ में मारवाड को तथा उसके शासकों को दूसरे राज्यों एवं शासकों की तुलना में अधिक महत्व दिया जाना स्वाभाविक था जो ख्यात की सामग्री में उभर कर सामने आता है। सम्भवत् इस ग्रन्थ की रचना 1643 ई. से 1666 ई के काल में हुई। ख्यात का सर्वोधिक महत्व इस बात में है कि नैणसी ने ख्यात की रचना के लिए सभी प्रकार के स्रोत– वंशावली, पीदावाली, चारणभाट परम्पराओं, ठिकानों के दस्तावेज, राजकीय आदेश, आदि सभी उपलब्ध सामग्री को खोज–खोज, जाँच पड़ताल के द्वारा ही अपनी ख्यात के लिए प्रयुक्त किया है।

ऐतिहासिक विश्लेषण में नैन्सी री ख्यात में उपलब्ध सामग्री को अधिक विश्वनीयता एवं प्रमाणिकता के दृष्टिकोण से अलग–अलग भाग के रूप में देखना चाहिए। 14वीं शताब्दी से पूर्व विभिन्न राजपूती राज्यों–खापों से जुड़ी कुल सामग्री अपूर्व, अधूरी जानकारी पर आधारित है जिसमें अनेक विषय उल्लेखों में यत्रतत्र भूल हुई है अतः इस सामग्री की जानकारी दूसरे प्रमाणिक स्रोतों से भी कर ली जानी चाहिए। 14वीं शताब्दी से 17वीं शताब्दी की सामग्री अधिक प्रमाणिक एवं विश्वसनीय है तथा प्राथमिक स्रोत के रूप में यह राजस्थान के इस काल का – राजनैतिकएवं सामाजिक–धार्मिक, जीवन का महत्वपूर्ण पक्ष दर्शाता है जो किसी ओर ग्रन्थ में उपलब्ध नहीं है।

नैणसी–री–ख्यात के आधार पर केवल विभिन्न राज्यों का वंश पर आधारित क्रमबद्ध राजनैतिक इतिहास ही नहीं लिखा जा सकता है अपितु इस ख्यात में राजपूती पहचान, अस्मितता, राज्यनिर्माण एवं उसका ढांचागत क्रमबद्ध, राजपूतीकरण की प्रक्रिया का क्रमिक विकास भी उजागर होता है। वास्तव में यह ख्यात उन सभी व्यक्तिगत वंशीय, सामाजिक, राजनैतिक आर्थिक पहलुओं को अपने में समेटे है जिसके आधार पर हम मध्यकालीन राजस्थान में प्रचलित राजपूती सामाजिक–राजनीतिक संस्थाओं व उनसे जुड़े मूल्यों मान्यताओं की कार्यप्रणाली को जान सकते है जो राज्य निर्माण में तथा उसके संगठनात्मक ढांचे से विशेष स्थान रखती थी।

परन्तु नैणसी री ख्यात को सर्वोपरिता में स्थान दिलाने का कारण इसमें वंशावलियों के बीच–बीच में उल्लेखित– बात, एवं शासकों के जीवन से जुड़ी विशेष घटनायें हैं। इनका ख्यात में स्थान ख्यात की क्रमता को ही नहीं दर्शाता अपितु हमें उस समय के प्रचलित– प्रभावी राजपूती मूल्यों, मान्यताओं से भी परिचित कराता है यद्यपि ये बातें अधिकतर कम महत्वपूर्ण वंश के किसी स्थानीय राजपूत के जीवन की घटना पर केन्द्रित होती है परन्तु इनका सूक्ष्म अवलोकन राजपूती राज्य एवं समाज से जुड़े महत्वपूर्ण प्रश्न वैचारिक धरातल पर राजपूती राज्य, व पहचान के किसी विशेष प्रश्न का जवाब अपने में समेटना।

राजपूती राजनीति एवमं समाज : प्रमुख संस्थाएं

राजपूती वर्ग का उत्थान पूर्वमध्यकालीन राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों का परिणाम था जब अनेक कबायली समूहों से जुड़े वर्गों को शासकीय स्तर की हैसियत का दर्जा प्राप्त हो जाता था।[5] यह एक प्रक्रिया थी जिसे राजपूतीकरण कहा जाता है। राजपूत वर्ग अपने मूल से मिश्रित वर्गों से आये थे तथा इस प्रक्रिया के साथ इनकी पहचान को दर्शाने, बनाये रखने के अनेक मानक (मूल्य व्यवहार) सामाजिक एवं राजनैतिक स्तर पर उभर कर सामने आये। जो एक राजपूत को व उसकी पहचान को परिभाषित करते थे। अतः पूर्वमध्यकाल में स्थापित ये मूल्य, मान्यतायें राजपूतों की पहचान के प्रतीक थे। यद्यपि राजपूतों की प्रथम पहचान वंश/कुल विशेष से जुड़ी थी तथा इसी तथ्य को नैणसी के द्वारा प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया गया है। नैणसी ने राज्य–वंश को अविभाज्य रूप से दर्शाया है तथा किसी भी राजपूत की हैसियत दर्जा उसके वंश से आका जाता था। वंश की मान, मर्यादा की, वंश की भूमि की क्षेत्रभूमि के छिनने का अर्थ था राजपूती दर्जा खतरे में पड़ना। इसीलिए भूमि की रक्षा के लिए संघर्ष, वैर साधना, वंशानुवंशगत शत्रुता बनाये रखना परम कर्त्तव्य माना जाता था।[6] इसी क्रम में वंश की अनेक उपशाखाएं भी जुड़ी होती थी। यद्यपि वे किसी मुख्य वंश की थी परन्तु क्षेत्रीय स्तर पर इनके उपवंशों का उभार होने लगा था तथा वह शाखा, अन्य किसी नाम से स्थानीय ठिकानेदार के नाम से *'वात', 'वती'* के रूप में जुड़ जाती थी।[7] इस क्रम में राजपूती शौर्यता प्रदर्शन, वीरता, युद्ध के निरन्तर संघर्षों से उपजी। ये संघर्ष केवल एकवंश का दूसरे वंश तक सीमित नहीं थे अपितु राजपूत वंशों का विस्तार अनेक क्षेत्रों में जनजातीय लोगों के साथ भी हुआ। नैणसी ने सिसोदियों के द्वारा मेर, मीणा जातियों की कीमत पर विस्तार होना बताया है।[8] बूंदी के हाडाओं ने बूंदी पर मीणा जाति को अपदस्त कर अपना राज आरंभ किया था[9] राठौर राजपूतों को पाली क्षेत्र में राज्य निर्माण की सफलता कन्हानामक मेर सरदार को हराने के बाद ही मिली थी।[10] परन्तु राजपूतों के संघर्ष सभी स्थानों पर बसे जनजातिय वर्गों से हुये आवश्यक नहीं था। मेवाड के राणाओं द्वारा राज्यनिर्माण की दिशा में कदम तब बढ़ा जब स्थानीय भील जाति को सहअस्तित्य के आधार पर राज्य व्यवस्था में महत्वपूर्ण स्थान दिया।[11] मेवाड के शासकों ने भील जाति के ईष्टदेव 'एकलिग्य' को राज्य देवता का दर्जा दे वैधानिकता का माध्मय बनाया। परन्तु राज्य निर्माण की इन आरंभिक अवस्थाओं में वंशों के प्रभाव क्षेत्रों के निर्माण में स्थानीय स्तर पर जनजातियों (बसे जनजातिय) वर्गों के साथ संपूर्ण वंशीय संबंधों के इलावा स्थानीय स्तर के भूमियों के संबंधों को वंश की सामूहिकता से बाहर व्यक्तिगत स्तर पर, राजपूत छवि, पहचान को गिराने वाला समझा जाता था। पाबूजी की बात में नैणसी ने दर्शाया है कि थोरी जाति को संरक्षण देने के लिए पाबूजी की राजपूती पहचान में गिरावट का संकेत राजपूती समाज में माना गया, तथा दूसरे राजपूतों द्वारा पाबूजी की हंसी उडाई जाती थी पाबू जी को राजपूती समाज में गिरती छवि के बचाव में अनेकों अवसरों में राजपूती मूल्यों, वचनपालन, वैरसाधना, संघर्षों में शौर्यता, लूटमारी अभियानों का नेतृत्व करना आदि प्रत्यन करने पड़े थे और अनन्तर राजपूती, अस्मितता के बचाव में (घोड़े के दल की प्राप्ति के लिए) विशेष राजपूती धर्म का पालन करने के लिए अपने प्राणों की आहुति देनी पड़ी।[12]

इस प्रकार वंश के दायरे से बाहर निकलने पर राजपूती पहचान को खतरा था तथा प्रत्येक राजपूत के लिए इसे बनाये रखने के लिए राजपूती मूल्यों के अनुरूप व्यवहार अनिवार्य हो जाता था। इस प्रकार राजपूत के सामाजिक एवं राजनैतिक जीवन का केन्द्रीय भाग वंश प्रणाली थी तथा वंशीय संघर्षों में बच चढ़कर भाग लेना, शौर्यता का प्रदर्शन, वंश के प्रति निष्ठा भाव की मर्यादा, वंश की क्षेत्र की रक्षार्थ प्राणों की आहुति परम राजपूती धर्म में गिना जाता था।[13] प्रतिरोधात्मक संघर्ष – वैर साधना प्रमुखता से पालन किया जाता था इस प्रकार कुल के मजबूत गठबंधन–रक्त संबंधों का प्रतीक था, उसके प्रति व्यवहार से

राजपूती पहचान परिभाषित होती थी। चारण भाट परम्परा को इन मूल्यों का संरक्षण, व्याख्याकार माना जाता था जो शासक के इतिहास को इन्हीं राजपूती मूल्यों से उभारते थे तथा संरक्षित रखते थे। परन्तु आरंभिक राज्य व्यवस्था का (वंश केन्द्रित राज्य) संस्थागत ढांचा का मुख्य आधार– *भाई बाट* प्रणाली थी।

वंशीय एकता सामूहिकता के बाहर *भाई बाट* प्रणाली राज्य विस्तार (क्षेत्राधिकार) का महत्वपूर्ण साधन थी। जो राज्य व उसकी व्यवस्था को संपूर्ण कुल का साझा सामूहिक, भाई चारे के आधार पर गठित करती थी। राज्य के वंश से जुड़े होने के लिए राज्य की भूमि को बराबर भागों में कुल के परिवारों में बांटा जाता था तथा के सभी अपने अपने क्षेत्रों में एक स्वतंत्र शासक की भांति व्यवहार करते थे तथा मुख्य शासक इनके कार्यप्रणाली में उत्तराधिकार के लिए वंशानुवंशगत दावा उचित होता था। राज्य के प्रति इन इकाईयों का मुख्य कर्त्तव्य राज्य की रक्षा के लिए सेना का प्रबंध करना था तथा अन्य कुल वंश से कोई गठजोठ नहीं करना था।

वास्तव में भाई बाट प्रणाली आरंभिक राज्य व्यवस्था में सामन्तीय मूल्यों, विकेन्द्रितकृत वैचारिकता का प्रतीक थी परन्तु स्थानीय वंश के परिवारों के लिए उनकी स्थानीय स्वायत्तता अलग स्वतंत्र छवि, अस्मितता का प्रतीक थी व स्थानीय स्तर पर इस वैचारिकता को बहुत महत्व दिया जाता था तथा इन मूल्यों में बदलाव आक्रमण का तीव्र प्रतिरोध किया जाता था क्योंकि यह स्थानीय व्यवस्था राजपूती स्तर की स्थानीय अस्मितता से जुड़ी थी। समानता, स्वायत्तता, वंशीय श्रेष्टता को निष्टा को *भाई बाट* प्रणाली से मापा जाता था। अतः *भाई बाट* प्रणाली की निरंतर प्राप्ति के लिए राजपूतों का संघर्ष वैध माना जाता था।[14] राव मल्लिानाथ ने *भाई बाट* प्रणाली के अधीन अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् दावा किया तथा कान्हदेव को मजबूर कर *भाई बाट* प्रणाली के अन्तर्गत पैतृक क्षेत्र को प्राप्त करने में सफलता पाई तथा अपने भाईयों में प्राप्त करने में सफलता पाई तथा अपने भाइयों में प्राप्त क्षेत्र का बराबर बंटवारा किया।[15] यह स्थिति स्थानीय स्तर पर भाई बाट प्रणाली के व्यवहार का पभाव दर्शाती है तथा आरंभिक राजपूती राज्य प्रणाली के प्रथम अवस्था का प्रतीक थी।

सम्भवत् यह जन जातीय कबायली प्रणाली का अवशेष था तथा 16वीं शताब्दी तक यही राजपूतों की ढांचागत प्रणाली का आधार रही। इसीलिये बहुत से इतिहासार इस राज्य व्यवस्था को परिपक्व राज्य प्रणाली न मानकर आदिम लक्षणों की प्रणाली मानते।[16] हालांकि *भाई बाट* प्रणाली वंश की फैलाव का सशक्त माध्यम था क्योंकि इसमें सभी को राज्य की सीमाओं से बाहर स्वतंत्र सैनिक अभियान चलाने की छूट होती थी।[17] राज्य के प्रशासनिक एवं सैनिक दोनों स्तरों पर भाई बाट प्रणाली की गहरी छाप थी तथा दोनों पर वंश के जुड़े भाई बन्ध ही संचालन में भूमिका निभाते थे अतः राज्य व्यवस्था वंशीय रक्त संबंधों, उत्तरदायित्वों से चलती थी जो राज्य व उसकी प्रणाली को संयुक्त भाईचारे के बीच आपसी गठजोड के महत्व को दर्शाता है। यद्यपि इस व्यवस्था में दूसरे वंश का प्रवेश नातेदारी को बढ़ाने की एक अन्य प्रणाली राजपूतों के समाज एवं राज्य में प्रचलित थी जो *सगा* कहलाती थी।[18] यह दो वंशों के बीच वैवाहिक संबंधों से संबंधित थी तथा बराबरी के संबंधों को मान्यता देती थी।

'सगा' से जुड़े संबंध कवायली मान्यता नातेदारी को मजबूती प्रदान करती थी व क्षेत्र पर बराबरी के अधिकार की मान्यता को पुष्ट करती थी। यद्यपि वंश के अन्तर्गत जुड़े सभी स्थानीय परिवारों के बीच साधनों, शक्ति, हैसियत को लेकर एक विभिन्न हमेशा कायम रही। फिर भी एक वंश एक शासक के प्रति निष्ठा इन्हें बराबरी में बांधती थी। वंशीय, भाई बाट प्रणाली से बाहर अधीनस्थ सामान्य (चाकरी) भी इस व्यवस्था में मान्य संस्था थी जिसमें आरम्भ में दूसरे वंश के अधीनस्थ राजपूती वर्गों को राज्य व्यवस्था से जोड़ा जाता था। ये अधीनस्थ मुख्यतः सैनिक दस्तों का प्रबंध करने वाले सेवक थे जिनको एक क्षेत्र पर अधिकार को मान्यता इस आधार पर कि वे नियमित रूप से सैनिक सेवा उपलब्ध करायेंगे। स्थानीय स्तर पर सेवक अधीनस्थ के बीच संबंध को निश्चित सेवा भाव उत्तरदायित्वों के नियमों से जोड़ा जाता था।[19] अधीनस्थ सेवाभाव (चाकरी) के व्यवहार से नई सामाजिक राजनैतिक संस्था के आगमन का सूचक था तथा नातेदारी रक्त संबंधों की कमजोर (विकेन्द्रीयकरण) व्यवस्था में बदलाव का प्रतीक थी अधीनस्थ सेवा भाव (चाकरी) व्यवस्था वास्तव में स्थानीय ठिकानेदारों द्वारा वंशीय की दायरे से बाहर अपनी स्थिति मजबूत करने, प्रभाव के दायरे को केन्द्रिकृत करने का हिस्सा थी। परन्तु राज्य व्यवस्था के लिए नई अवस्था के आगमन का सूचक। परन्तु 16वीं शताब्दी तक भाईबाट सगा प्रणालियाँ ही सभी राजपूती राज्यों की व्यवस्था का मुख्य प्रभावकारी आधार बनी रही।

राज्य व्यवस्था की ओर संक्रमण की अवस्था – 'भाईबाट चाकर'

16वीं शताब्दी उत्तरार्द्ध तथा 17वीं में राजपूती राज्य व्यवस्था में महत्वपूर्ण बदलाव का संकेत मिलता है जब अधिकांश राज्यों के मुख्य शासकों द्वारा अपने वंश/ कुल के सगे संबंधियों के साथ *भाई बाट* बराबरी के संबंधों को *भाई बाट चाकर* व्यवस्था द्वारा बदलने के प्रयास होने लगे। यह राजपूती राजनैतिक ढांचे में नई संस्था के प्रवेश द्वारा कबायली मूल्यों मान्यता वाली प्रणाली को समाप्त कर केन्द्रिकृत व्यवस्था की ओर बढ़ना था[20] *नैणसी री ख्यात* में स्पष्ट उल्लेख है कि मुख्य शासक वंशीय भाई बाट प्रणाली की भाई चारे, सामूहिकता की जनजातिय कही जाने वाली व्यक्तिगत निष्ठा की ओर बढ़ना चाहते थे तथा भाई बाट प्रणाली के अन्तर्गत स्थानीय स्तर पर प्राप्त विशेष अधिकारों की मान्यता को समाप्त कर सीधे साधनों को अपने अधीन लाना चाहते थे। तथा वंशानुवंशगत अधिकारों के दावों को सेवा भाव निष्ठा से देखने लगे थे अतः यहां राजपूती दर्जा, हैसियत, पहचान के नये मूल्यों की तलाश, आरम्भ होने लगी तथा पुराने मूल्य मान्यता को खतरा होने लगा। यह नई व्यवस्था सीधे तौर पर स्थानीय स्तर पर साधनों तथा सत्ता पर अधिक नियंत्रण लाने का प्रयास था तथा इसके स्थानीय राजपूती ठिकानेदारों के अधिकारों में कटौती होना जुड़ा था। अपितु इनसे जुड़ी राजपूती पहचान, अस्मितता के खोने का खतरा था। वास्तव में यह वैचारिकता बादलाव का सूचक था।[21] ऐसे बदलावों के विरोधात्मक प्रतिक्रिया होना स्वाभाविक था क्योंकि पूरी राजपूती अस्मितता नये ढंग से परिभाषित होनी थी। *नैणसी री ख्यात* में दर्ज बातें इन्हीं बदलाव की प्रतिक्रिया को दर्शाती है।

ख्यात में दर्ज मल्लिनाथ से संबंधित बात में व्यवस्थाओं के अनेक अन्तर्गत उभरकर सामने आते हैं। मल्लिनाथ के पिता वरिष्ठ पद पर स्थानीय स्तर के ठिकानेदार थे उनकी मृत्यु के उपरानत चाचा कान्हडदेव जो स्वयं भाई बाट प्रणाली के आधार पर मल्लिनाथ के पिता के समानान्तर ठिकानेदार के पद पर थे, ने मल्लिनाथ को उसके वंशानुगतपैतृक दावेदारी (विरासत) से वंचित करने की नीति अपनाई। उसने मल्लिनार्थ को बराबरी का दर्जा किसी भी रूप में स्वीकार नहीं किया तथा उसे एक अधिनस्थ (चाकर) के रूप में अपने गठबंधन में रखना स्वीकार किया। मल्लिनाथ ने प्रतिकूल परिस्थितियाँ देखकर कान्हडदेव के चाकर की स्थिति को स्वीकार किया तथा अपनी योग्यता के बल पर शक्ति को जुड़ाना आरम्भ किया तथा जल्द ही उसने अपने विरासत को प्राप्त करने के दावे जताने आरम्भ किये तथा ऐतिहासिक बात में दर्ज है कि उसने न केवल भाई बाट प्रणाली के आधार पर अपना हक लेने की जिद की अपितु कान्हडदेव को अपनी शक्ति प्रदर्शन से भयभीत कर शासक वर्गों के दूसरे ठिकानेदारों के सामने कान्हडदेव को वचनों से बाध दिया। संपूर्ण

बात में मल्लिनाथ को चाकरी प्रणाली के विरुद्ध अनेकों बार आवाज उठाते दिखाया गया है। मल्लिनाथ ने अपनी पैतृक विरासत को अपने सगे भाइयों में बराबरी के आधार पर बांटा। पाबूजी को कोलू गांव की जागीर में एक कम महत्वपूर्ण राजपूत योद्धा के रूप में पाते है तथा उसके वंश के द्वारा, उसके राजपूती धर्म निर्वाह न करने–जैसे स्थानीय जनजातियों से जुड़ना (थोरी जाति के भाइयों को शरण देना) आदि से उसका राजपूती दर्जा को पुनः अपने वीरता शौर्यता के कारनामों– सिन्ध क्षेत्र से ऊंटो की लूटमारी अभियानों, स्थानीय पशुधन की रक्षा तथा घुड़सवार योद्धा के रूप में अपने स्तर को बनाये रखना, राजकुमारी से वचन साधना, वंश की मर्यादा के अनुरूप रक्षार्थ प्राणों की बाजी लगाना आदि कारनामों से अपनी छवि को गिरने नहीं देते है। पाबूजी स्पष्टत एक राजपूती धर्म पालक के श्रेष्ठ योद्धा बन कर उभरते है तथा भाई बाट प्रणाली के अनुरूप व्यवहार के हिमायती है।

शासक के स्तर पर चाकरी प्रणाली को भाई बाट प्रणाली के स्थान पर इस आशय से लागू किया जा रहा था कि इससे दूसरे कुल के प्रति निष्ठा समर्थन व्यक्तिगत आधार पर प्राप्त हो सकता था। यद्यपि चाकरी, नौकर की भांति नहीं थी वह एक सैनिक सेवादारी थी। जिसका एक निश्चित भूभाग पर अधिकार था तथा अधिपति से नये गठबंधन का सूचक था। चाकर के साथ नये प्रकार के संबंध विशिष्ठ उत्तरदायित्व के साथ जुड़े थे 'सेवा देना', जिनके पालन का वचन देना होता, सेवानिष्ठा का वचन देना होता था। जो एक अधीनस्थ सामन्तीय भाव को दर्शाता है। चाकर की उक्त शासक के ठाकुर पदवी से पहचान होती थी। चाकरी व्यवस्था स्थानीय स्तर पर एक शासक ढांचे में सुदृढ़ स्थिति का प्रतीक थी यह वास्तव में राजपूतों की संख्याओं पर मुगलिया प्रभावों से जुड़ी थी मुगलों से जुड़ने से राजपूत वर्ग के शासकों को व्यक्तिगत निष्ठा को स्वीकार करना पड़ा व दूसरी ओर उनकी अपने स्थानीय कुल पर निर्भरता में कमी आई। अब इन शासको ने एक निश्चित नीति के अन्तर्गत अपने वंश के स्थानीय शाखाओं पर नियंत्रण बढ़ाने की आवश्यकता महसूस की तथा उनके स्थानीय साधनों पर नियंत्रण बढ़ाना चाहा जिनका उपभोग ये स्थानीय शाखा वाले भाई बाट प्रणाली के आधार पर बनाये रखते थे। स्थानीय स्तर पर इन प्रयासों से न केवल हैसियत बदली अपितु वंशीय परम्परा के संबंध एकदम उल्ट गये। प्रमुख शासकों ने स्थानीय कुलों के विरुद्ध सैनिक अभियानों से भी परहेज नहीं किया। ताकि कुल, जन्म के अधिकारों के प्रभाव कम हो। इस प्रकार यह रूपान्तरण मात्र संस्थागत नहीं था अपितु पूरी वैचारिकता के बदलावों से जुड़ा था। इससे न केवल स्वायत्तता जुड़ी थी अपितु राजपूती पहचान हैसियत को खतरा दिखाई दिया। स्वाभाविक है कि स्थिति कमजोर होने पर वैचारिक स्तर पर इन शासकों को पुनः राजपूती मूल्यों की दुहाई तथा प्रतिरोध के वैकल्पिक (सीधे संघर्ष के स्थान पर) साधन तलाश किये गये।[22] के बातो इसी प्रतिरोध के दर्ज कराने के माध्यम थे। तथा आरम्भिक परंपराओं के राजपूती व्यवहार से जुड़े मूल्य पुनः उठ खड़े हुये तथा उसी के संदर्भ में दावेदारी उभरने लगी।

वास्तव में नैणसी के कालतक राजपूती समाज–राजनीति के मूल आधारों को कई स्तरों पर बदलने की चेष्टा सफल रूप से राज्यों के शासकों द्वारा हो चुकी थी तथा नये ढांचागत बदलाव के प्रयासों से स्थानीय स्तर पर केन्द्रिय नियंत्रण बढ़ने लगाया जिससे स्थानीय ठिकानेकारों द्वारा प्रतिकार, प्रतिरोध प्रतिक्रिया जरूर हुई। नैणसी जो राजपूती मूल्यों मान्यताओं का प्रतिरक्षक के रूप में बने। बनाये रखने का समर्थक था तथा किसी भी प्रयास से उपजी स्थिति– तनाव, चिन्ताओं उसके काल के मूल में थे। वह इन ऐतिहासिक बातों के द्वारा ढांचागत बदलावों के प्रति अपनी असहमती दर्ज करवाता नजर आता है।

नौकरशाही वर्गीय राज्य व्यवस्था की ओर

17वीं शताब्दी में राज्य ढांचागत दृष्टि से नये बदलाव–पट्टादारी प्रणाली की ओर हमारा ध्यान खींचता है[23] यह सीधा वंशानुवंशगत अधिकारों पर चोट थी क्योंकि इस व्यवस्था में राज्य की व्यवस्था से जुडने (मनसबदारी प्रणाली की भांति) के लिए निश्चित, पर शासक द्वारा दिया जाता था तथा नियत घुड़सवारों की संख्या निश्चित कर, उसे खर्च के बराबर राज्य के क्षेत्र का भूराजस्व प्राप्त करने का अधिकार दिया जाता था जिसमें भूराजस्व के अनुमानित आकलन की *रैरव* पद्धति को अपनाया जाने लगा।[24] वास्वत में शासकवर्गों के साथ मुख्य शासक द्वारा पट्टे पर आधारित संबंधों को अधिक जोर दिया जा रहा था। यह वास्तव में इन वर्गों को नौकरशाही के रूप में बदलना तथा राज्य के लिए पूर्णत निर्भर बनाना था। मारवाड के शासक राजा मोटा उदय सिंह के काल में वंश से जुड़े सभी परिवारों को पट्टा के आधार पर सेवाभाव के नये संबंध बनाने पर जोर दिया जाने लगा। तथा एकक्षेत्र के भूराजस्व को प्राप्त करने के स्थायी अधिकार के स्थान पर अब ठिकानेदारों के तबादले भी किये जाने लगा। वास्तव में यह प्रथा मालदेव के द्वारा शुरू की गइ थी।[25]

इस प्रकार परम्परा अनुसार स्थानीय वंशानुवंशागत अधिकारों को तोड़ प्रशासन के स्तर पर अधिक से अधिक केन्द्रिकरण की ओर राज्य व्यवस्था को मोडना था जिसे भाई बाट प्रणाली के बचे हुये लाभों को समाप्त करना तथा स्थानीय साधनों को सीधे शासक के नियंत्रण लाना था जो सीधे शासक के प्रति व्यक्तिगत निष्ठा पर आधारित थे। पद, पदक्रम, निष्ठा के नये मापदण्ड तथा राजपूती पहचान के नये आधार बनने की ओर प्रयास था[26] जिससे राजपूती परम्परागत मूल्यों की पहचान धूमिल होती जा रही थी। राज्य की सेवा के बदले नौकरशाही वर्ग की भांति उन्हें वेतन 'रैरव' के रूप में दिया जाने लगा था। अब ठिकानेदारों को राज्य के प्रति बहुत से उत्तरदायित्वों को पूरा करने का व्यक्तिगत दबाव रहता था स्थानीय भूराजस्व के आंकड़ों से वास्तविक आय जानने का अवसर प्राप्त हुआ।

घुड़सवार का अनुमानित आय के आधार पर निर्धारण किया जाता था तथा व्यय अधिक होने पर तलब व्यवस्था में पूर्ति पूरा करने के प्रयास होते थे।[27] इससे स्थानीय स्तर पर स्थानीय रक्त संबंधों पर आधारित क्षेत्रीय जमीनी हक के दावों को ओर कमजोरी मिली। तथा पट्टा भी जमीनी हक, राजपूत नई पहचान का माध्यम बनने लगा जिससे परपंरागत पहचान के दावे धुमिल होने लगे। अब प्रशासनिक स्तर पर ओहदे, प्रतिष्ठा, पहचान के नये रूप तरीके उपलब्ध होने लगे। जिससे सत्ता से जुड़ रहने के नये माध्यम ईजाद हुये। यह राजपूती समाज के राज्य के स्तर पर ढांचागत परिवर्तनों का द्योतक थे तथा निष्ठा की राजपूती अवधारणा वंश, कुल की सीमाओं से बाहर, व्यक्तिगत स्तर पर निर्धारित होने लगी थी। हालांकि ये ढांचागत सहज नहीं थे ऊपर से जबइन परिवर्तनों को आरोपित किया गया तो स्थानीय स्तर पर भिन्न–भिन्न प्रतिक्रिया भी दिखाई दी। क्योंकि स्थानीय स्तर पर परम्परा मूल्य, मान्यतायें प्रभावी थी तथा स्थानीय स्तर के ये मूल्य मान्यतायें से ही उनके हकों का प्रश्न जुड़ा था नई व्यवस्था में उनको खाने का। अतः ढांचागत बदलाव से तनाव (प्रतिरोधात्मक) उभरने स्वाभाविक थे।

ऐसे में स्थानीय ठिकानेदारों द्वारा पूर्ववती राजपूती मूल्यों की दुहाई देना, स्मरण कराना उनकी हैसियत को बचाने का एक सांस्कृतिक प्रतिरोध 17वीं शताब्दी में भारी तनाव, टकराव, अर्न्तविरोधों से भरी थी। जिससे उतार चढ़ाव के कई दौर थे परन्तु ये परिवर्तन, अर्न्तविरोध उनका प्रतिरोध तथा प्रतिक्रिया नई राज्य व्यवस्था का राजपूती ढांचे में घूसपैठ करने का प्रयास था तथा इसी परिवर्तन से राजपूतों के अपने वंशीय उत्तरदायित्व, अधिकारों में फेरबदल होना स्वाभावित था तथा परंपरागत पहचान के मूल्यों से स्थिरता के संकट पैदा होना हर स्तर पर उभरकर

आने लगा था। इस प्रतिरोध के लिए ही राजपूती धर्म–मूल्यों की दुहाई ख्यातों में मिलने लगती है अतः यह एक वैचारिकता में बदलावों का सूचक भी था। वैचारिकता के स्तर पर नये–नये मिथक कथाओं तथा ऐतिहासिक बातों को समर्थन जुड़ाने के लिए पुनः जोर सहित प्रस्तुत किया जाना एक स्वाभाविक कार्य था।

राव बीदा द्वारा जांगल प्रदेश में मोहिला राजपूतों को पट्टे प्रदान किये गये थे परन्तु उनके द्वारा पट्टे की शर्तों में कोताहाली होने पर पाया जाने पर पट्टा समाप्त कर उन्हें सेवा से मुक्त कर दिया गया।[28] पट्टे का आधार उस क्षेत्र की संपूर्ण आय का आंकलन अनिवार्य था जबकि भाई बाट प्रणाली या भाईबाट चाकर में भूराजस्व का आकलन केन्द्रिय स्तर पर किसी रूप में नहीं होता था। यही आकलन रैरव प्रणाली के द्वारा राजपूती शासकों के क्षेत्र की राज्य द्वारा भूराजस्व वाली आमदनी के आंकड़े जुटाने से सम्भव हुआ। इसीलिए 17वीं शताब्दी के उत्तरर्द्ध में रैख आंकड़ों का दर्ज ब्यौरा दस्तावेज बढ़ने लगते है।[29] तथा ऐसी परिस्थितियों में यह राज्य के द्वारा स्थानीय स्तर पर आर्थिक साधनों पर सीधे नियंत्रण के प्रयास से स्थानीय ठिकानेदारों के आर्थिक हितों पर कटौती थी। ऐसी परिस्थितियों में स्थानीय स्तर के ठिकानेदारों में रोष स्वरूप प्रतिक्रिया एवं बढ़ते तनाव दिखाई देने लगते है जब परम्पराओं द्वारा पूर्ववर्ती शासक–स्थानीय ठिकानेदार के भाई बाट प्रणाली पर आधारित मूल्यों–संबंधों से जुड़े सुर (घटना, बाते) पुनः स्मरण की जाने लगी। इस प्रकार राजपूती राजनीति एवं समाज इन परिवर्तनों से संगठनात्मक रूप से नई राज्य व्यवस्था की ओर जाता प्रतीत होता है जिसमें रक्त, संबंधों, सगे संबधी, भाईचारे, सामूहिकता, साझादारी से जुड़े संस्थागत प्रणाली को अधिक केन्द्रियकृत प्रणाली अपनाने पर जोर दिया जा रहा था।

इन परिवर्तनों से न केवल एक राजपूत की आन्तरिक ढांचे से जुड़ी निष्ठा, छवि के व्यवहार में बदलाव आ रहे थे अपितु वंश के दायरे से बाहर व्यक्तिगत निष्ठा के नये मूल्य जुड़ रहे थे तथा राजपूती अस्मितता, राजपूती संस्कृति, राज्य व्यवस्था में विश्वास, मूल्य, रैंक, नये रूप से परिभाषित हो रही थी। ऐसी बदलाव की परिस्थितियों में राज्य तथा व्यक्तिगत स्तर पर वैधानिकरण के नये–नये साधनों की तलाश, सम्भावित रूप का सहारा लेना सामान्य प्रक्रिया थी। राजपूती धर्म को भी मोक्ष प्राप्ति का माध्यम दिखाना, भी राजूती व्यवहार के अंशों को बचाव करने का प्रयास था[30] जबकि राजपूती धर्म का निर्वाह दो विरोधाभाषी रूपों–भाईचारे का समर्थन तथा व्यक्तिगत निष्ठा में अपने स्वामी की सेवा, से दिखाई देता है। इसीलिए राजपूती मूल्यों के संरक्षक चारण–भाटो की कथाओं, में नये मिथकों दोनों रूपों में– पुरानी व्यवस्था समर्थन का नए संबंधों का रूप– पुनः अपने साहित्य का मुख्य विषय बनाना शुरू किया।

राजपूती राज्य व्यवस्था के ये बदलाव वास्तव में आन्तरिक एवं बाह्य दोनों दबावों से जुड़े थे। मुख्य शासकों के मुगलों से जुड़ने से नये अवसर अतिरिक्त साधन उपलब्ध हुये तथा उन्हें अपनी सेवा वंश की सीमाओं से बाहर मिले इससे राजपूती सरदारों पर निर्भरता में कमी आई तथा राजपूती कार्यप्रणाली की संस्थाओं को जानने का मौका मिला। इसके अतिरिक्त आन्तरिक ढांचे में भी अपने सत्ता, साधनों के लिए केन्द्रियकरण की ओर उनके प्रयास तेज हुये अतः मुख्य रूप से 3 स्तर भाई बाट प्रणाली, भाई बांट चाकर प्रणाली, एवं पट्टादारी व्यवस्था इसके मूल थे।

संदर्भ सूची

1. गुप्ता, कृष्ण स्वरूप व्यास, गोपाल वल्लभ, राजस्थान के इतिहास के स्रोतः एक संक्षिप्त अध्ययन, पब्लिकेशन स्कीम, जयपुर, 1988, पृ. 41–68
2. रामनारायण दूगड (अ०), गौरी शंकर हीराचन्द ओझा (सं.) मुहणोत नैणसी की ख्यात, भाग 1, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, चतुर्थ–संस्करण 2022, पृ. 1–29
3. नैणसी का जन्म – वि.सि., मृत्यु 1610 ई., मृत्यु 1670 देखे– कृष्ण स्वरूपगुप्ता व गोपाल वल्लभ व्यास 10 वहीं, पृ. 16
4. नैणसी ने वैसे अनेक ऐतिहासिक ग्रन्थों की रचना की। लेकिन उनकी प्रसिद्धि इसी रचना से जुड़ी है।
5. परम्पराओं में राजपूतों के उभार को क्षत्रिय वंश से जोड़कर देखा जाता है तथा पौराणिक क्षत्रिय वंशावली– सूर्यवंशी, चन्द्रवंशी, अग्निकुण्ड सिद्धान्तों से उद्भव बताया है जो काल्पनिक मिथक है वास्तव में ये सिद्धान्त उद्भव को दर्शाने के स्थान पर राजपूत वंशों के मूल को छिपा, वैधानिकता देने के प्रयास अधिक थे। देखे– बी.डी. चट्टोपध्याय, "दी एमेरजेंस आफ री राजपूतस एज हिस्टोरिकल प्रोसेस इन अर्ली मिडिवल राजस्थान" में दी मेकिंग अर्ली मीडिवल इण्डिया, ऑक्सफोर्ड प्रेस, दिल्ली, 2000
6. कर्नल जेम्स टाड, अलाल्स एण्ड ऐन्टीक्यूटी आफ राजस्थान भाग–1, (सं.) विलियम क्रूक, लोप्राइस, दिल्ली, 1995, पृ. 29–34
   जिग्लर, नोर्मन पी. "सम नोटस आन राजपूत लोयल्टीज ड्यूरिंग दी मुगल पीरियड" दी मुगल स्टेट (1526–1750) स. मुज्जफर आलम व संजय सुब्रामनियम, ऑक्सफोर्ड प्रैस, दिल्ली, 1998, पृ.सं. 182
7. नैणसी री ख्यात, नैणसी, मुहणोत नैणसी–री–ख्यात, (सं.) गौरीशंकर ओझा, (अनु.) रामनारायण दूगडद्व राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, पृ.सं. 43
8. नैणसी री ख्यात, भाग–1, पृ. 43, 59, 110
9. नैणसी री ख्यात, भाग–1, पृ. 121
10. नैणसी री ख्यात, भाग–1, पृ. 62
11. नैणसी री ख्यात, भाग–1, पृ. 144–45
    नन्दनी सिन्हा कपूर, स्टेट फोर्मेसन इन राजस्थान : मेवाड ड्यूरिंग दी सेवन्टींथ– फिफटींथ सेन्चूरिज, मनोहर, दिल्ली, 2001
12. नैणसी री ख्यात, पृ. 125–133, 144–145 पाबूजी राठौर स्थानीय मूर्तियाँ जिसने गैर राजपूतो– निम्न वर्गों की रक्षार्थ निम्नवर्गों में पूज्यनीय स्थान प्राप्त किया तथा राजपूत वर्गों द्वारा उसकी आलोचना की जाती थी। पाबूजी प्रमुखता देवता के रूप में उभरे तथा 19वीं शताब्दी में राजपूतीकरण हुआ जब राजपूतों ने उन्हें अपनाया पाबूजी की मारवाड राज्य प्रमुख स्थान आज भी प्राप्त है। देखें – जोन.डे. स्मिथ, दी इपिंग आफ पाबूजी ऑक्सफोर्ड प्रेस, दिल्ली, 1998
13. कर्नल जैम्स टॉड, पृ.सं. 29–34 टाड ने राजपूती समाज, वंश की राजनीति से जुड़े मूल्यों का विशद वर्णन किया है।
14. नैणसी री ख्यात– भाग–2, पृ. 68–71
15. उपरोक्त
16. जिग्लर, वही, पृ. 187
17. चटोपाध्याय, बी.डी. दी मेकिंग आफ अर्ली मीडिवल इण्डिया, ऑक्सफोर्ड प्रैस, दिल्ली, 2003, पृ. 182–186
18. जिग्लर, समनोट्स आन दी राजपूत लोयल्टी, पृ. 183
19. नैणसी री ख्यात, भाग–1,
    जिग्लर, वही, 185–186
20. शर्मा, जी.डी. राजपूत पोलिटीः ए स्ट्रडीज आफ पोलिटिकल एण्ड एडमिनिस्ट्रेशन (1638–1749) दिल्ली, मनोहर, 1977, पृ. सं. 12–15
21. जिग्लर, वही, पृ. 187–190
22. उपरोक्त
23. शर्मा, जी.डी., राजपूत पोलिटी, पृ. 118–159
    जिग्लर, सम नोट्स आन लोयटी, पृ. 188–190

24. शर्मा, जी.डी., राजपूत पोलिटी, पृ. 118–159
जिग्लर, सम नोटस आफ लोयल्टी, पृ. 188–189
25. नैणसी री ख्यात, भाग–1, पृ. 95, 193
भाग–2, पृ. 257
वी. एल. भदानी, पीजेन्ट, आरटिजन एण्ड एण्ट्रपरीन्यूरः इकोनोमी ऑफ मारवाड इन दी सेंथटींथ सेन्यूरी, रावत, दिल्ली, 1999, पृ. 235–282
26. जिग्लर, वही, पृ. 189
27. शर्मा, जी.डी., वही, पृ. 18–20
28. नैणसी री ख्यात, वही भाग–2, पृ. 193
29. नैणसी री ख्यात, वही भाग–2, पृ. 193
30. जिग्लर, वही, पृ. 201